5

सांख्यदर्शन: पातञ्जलयोग तथा बौद्ध योग का मूलस्रोत

डॉ. अर्पित कुमार दुबे
सहायक आचार्य(संस्कृत), मोरारजी देसाई राष्ट्रीय योग संस्थान,
आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
Email: arpitkumarprince@gmail.com
डॉ. कामिनी कौर
सहायक आचार्य(संस्कृत), माता सुन्दरी कॉलेज फॉर वुमेन,
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।
Email: kimmijha@gmail.com

शोध सारांश

भारतीय दर्शन की विविध धाराएँ आत्मज्ञान, मुक्ति और मानव दु:ख की गहन व्याख्या करती हैं।वेद, उपनिषद्और विभिन्न दर्शनों (सांख्य, योग, वेदांत आदि) में इन प्रश्नों को भिन्न दृष्टिकोणों से संबोधित किया गया है। विशेष रूप से, बौद्धदर्शन औरयोगदर्शन ने भारतीय चिंतन परंपरा को न केवल आकार दिया है, अपितु व्यावहारिक मार्गदर्शन भी प्रदान किया। इनमें गौतम बुद्ध और महर्षि पतञ्जलि विशेष स्थान रखते हैं।

यद्यपि गौतम बुद्ध और महर्षि पतञ्जलि अलग-अलग ऐतिहासिक पृष्ठभूमियों से आते हैं-एक श्रमण परंपरा से और दूसरा वैदिक परंपरा से परंतु फिर भी दोनों की शिक्षाओं में आश्चर्यजनक साम्य देखने को मिलता है। इस साम्यता की जड़ें कपिल मुनि द्वारा प्रतिपादित सांख्य दर्शन में निहित हैं, जिसे योग तथा बौद्ध परंपरा दोनों ने अपने-अपने तरीके से आत्मसात किया है। उनकेदृष्टिकोणोंमेंकईबाह्यअंतरदिखाईदेतेहैं, परंतु सूक्ष्म अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि दोनों की शिक्षाओं की जड़ें एक समान दार्शनिक आधारमें निहित हैं। यह दर्शन, चेतना और भौतिक

Volume 4, Issue 2, 2025, p.67-80, ISSN 2583-6331
©Indira Gandhi National Open University

प्रकृति के द्वैत पर आधारित है, जो पतञ्जलि के योगसूत्रों और बुद्ध के मध्यम मार्ग दोनों में गहराई से प्रतिबिंबित होता है।विशेषतः कपिल मुनि द्वारा प्रतिपादित पुरुष–प्रकृति द्वैतवाद, दुख की उत्पत्ति का मनोवैज्ञानिक विश्लेषणऔर कैवल्य की अवधारणा ने पतंजलि और बुद्ध, दोनों को प्रभावित किया।

यद्यपिउन्होंनेअलग-अलग सांस्कृतिक और दार्शनिक मार्ग अपनाए, परंतुउनकाउद्देश्यएकहीरहा- मानव दुःख से मुक्ति।उनकी शिक्षाएँ आज भी ध्यान, योग और मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।इस प्रकार, सांख्य दर्शन को पातञ्जल योग और बौद्ध योग का मूलस्रोत कहना न केवल तर्क संगतहै, बल्कि यह भारत की दार्शनिक एकता और विविधता का जीवंत प्रमाण भी है।

कूट शब्द:सांख्य दर्शन, पातञ्जल योग, बौद्ध दर्शन, प्रकृति, पुरुष, कैवल्य

सांख्य दर्शन:मूलआधार

भारतीय दार्शनिक परंपरा में मानव अस्तित्व, दुःख और मुक्ति की समस्या को केंद्र में रखकर अनेक विचारधाराओं का उद्भव हुआ है। इन विचारधाराओं में सांख्य, योग और बौद्ध धर्म अत्यंत प्राचीन, प्रभावशाली और अनुभूतिआधारित दार्शनिक विचारधाराओं को जन्म देते हैं। बुद्ध और पतञ्जलि, भिन्न ऐतिहासिक परिस्थितियों में उद्भूत महान दार्शनिक व विचारक हैं, किंतु उनके चिंतन में आश्चर्यजनक रूप से कई समान सूत्रों का विकास दृष्टिगोचर होता है, जिनकी जड़ें स्पष्ट रूप से सांख्य दर्शन में पाई जाती हैं। सांख्य दर्शन, जिसकेप्रतिपादक कपिल मुनि हैं, भारतीय चिंतन की सबसे पुरातन दार्शनिक प्रणाली मानी जाती हैऔर प्रथम बार तत्त्व मीमांसा को विश्लेषणात्मक रूप में सांख्य दर्शन ने प्रस्तुत किया है।सांख्य दर्शन भारतीय दर्शन की छह आस्तिक दर्शनों में से एक है और इसे नास्तिकों और आस्तिकों के बीच की कड़ी भी माना जाता है। सांख्य के अनुसार समस्त जगत दो मूल तत्त्वों से बना है-पुरुष(चैतन्य) और

©Indira Gandhi National Open University

प्रकृति(जड़)। ये दोनों अनादि और स्वतंत्र तत्त्व हैं। इसमेंसत्तात्मकद्वैतवाद (पुरुष-प्रकृतिद्वैतवाद) को स्वीकार किया गया है। यह दर्शन इस विश्वास पर आधारित है कि समस्त संसार प्रकृति और पुरुष, इन दो अनादि तत्त्वों की परस्पर क्रिया से उत्पन्न हुआ है।[1]पुरुष शुद्ध चेतना है, जो साक्षी रूप में स्थित है, जबकि प्रकृति जड़, परिवर्तनशील और सक्रिय तत्त्वहै।[2]इन दोनों का संयोग (अज्ञानजनित) ही दुःख का कारण है।[3] सांख्य दर्शन में 25 तत्त्वों का विवेचन है: प्रकृति, बुद्धि, अहंकार, मन, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच तन्मात्राएँ, पाँच महाभूत और पुरुष। प्रकृति से सभी विकार उत्पन्न होते हैं, और पुरुष केवल साक्षी है। दु:ख का कारण यह है कि पुरुष स्वयं को प्रकृति से अभिन्न समझता है। जैसे ही पुरुष को अपने पृथक् स्वरूप का बोध होता है, अर्थात् जब यह विवेकख्याति होती है कि पुरुष प्रकृति से भिन्न है, वही मुक्ति की अवस्था कहलाती है, जिसे कैवल्य कहा गया है।[4] इस उद्घाटन से स्पष्ट है कि सांख्य दर्शन का उद्देश्य केवल तत्त्व-गणना नहीं, अपितु मानवीय दुःख के मूल कारणों की खोज तथा उससे मुक्त होने की युक्तियों की विवेचना है।

सांख्य का यह विश्लेषण मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है और यही इसकी विशेषता है। यह द्वैतवाद न केवल योग दर्शन की नींव बनता है, बल्कि बौद्ध दर्शन की कई अवधारणाओं का पूर्ववर्ती भी प्रतीत होता है। यद्यपि सांख्य दर्शन मूलतःईश्वर निरपेक्ष और केवल सिद्धांत वादी प्रतीत होता है, परंतु इसकी मनोवैज्ञानिक अंतर्दृष्टियाँ पातञ्जल योग और बौद्ध ध्यान पद्धति में स्पष्टरूप से दिखाई देती हैं।

पतञ्जलिकायोग: सांख्य का व्यावहारिक स्वरूप

[1] "पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य। पङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृत: सर्ग:।" सांख्यकारिका21

[2] "तस्माच्च विपर्यासात् सिद्धं साक्षित्वमस्य पुरुषस्य। कैवल्यं माध्यस्थ्यं दृष्टृत्वमकर्तृभावश्च।"सांख्यकारिका19

[3] "रूपै: सप्तभिरेव तु बध्नात्यात्मानमात्मना प्रकृति:। सैव च पुरुषार्थं प्रति विमोचयत्येकरूपेण।" सांख्यकारिका63

[4]"दुःखत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदभिघातकहेतौ। पुरुषार्थ एव हेतुः।"सांख्यकारिका 1-2

"प्राप्ते शरीरभेदे चरितार्थत्वात् प्रधानविनिवृत्तौ। ऐकान्तिकमात्यन्तिकमुभयं कैवल्यमाप्नोति।" सांख्यकारिका 68

Volume 4, Issue 2, 2025, p.67-80, ISSN 2583-6331
©Indira Gandhi National Open University

पतञ्जलि के योगसूत्र वस्तुतः सांख्य के दार्शनिक आधारों का एक व्यावहारिक अनुप्रयोग हैं। उन्होंने पुरुष-प्रकृति द्वैत को स्वीकारते हुए एक व्यवस्थित त्रिस्तरीय साधना-पथ प्रस्तुत किया है- अभ्यास-वैराग्य, क्रियायोग व अष्टाङ्गयोग।पतञ्जलि ने **"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः"**[5]के द्वारा यह उद्घोषणा की कि योग का मुख्य उद्देश्य चित्त की वृत्तियों को शांत करना है ताकि साधक अपने वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार कर सके। पतञ्जलि ने सांख्य के 25 तत्त्वों को स्वीकार करते हुए योग को आठ अङ्गों में व्यवस्थित किया है जिसमें यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि सम्मिलित हैं। इन आठों अङ्गों का अंतिम लक्ष्य कैवल्य की प्राप्ति है-**"तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्"**[6]। ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि पतञ्जलि ने सांख्य के ईश्वरनिरपेक्ष रूप को किञ्चित् परिवर्तित करते हुए ईश्वर को स्वीकार किया और उसे "पुरुषविशेष" कहा-जो समस्त क्लेशों और कर्मों से अतीत है। यह विचार **"क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः"**[7]में प्रतिपादित हुआ है। इस रूप में पतञ्जलि का योगदर्शन सांख्य का ही एक विस्तृत आध्यात्मिक व्याख्यान बन जाता है, जो विशुद्ध अभ्यास और अनुशासन पर बल देता है।

बुद्धकादृष्टिकोण: मनोवैज्ञानिकअंतर्दृष्टि

बौद्ध धर्म-दर्शनविशेषतः थेरवाद और महायान परंपराओं में योग एक केन्द्रीय साधना पद्धति है। बुद्ध के ध्यान की पद्धतियाँ जैसे सतिपट्ठान, विपश्यना और आना पानसति, आंतरिक जागरूकता और अंतर्दृष्टि पर केंद्रित हैं।यह ध्यान प्रक्रिया मन के स्वभाव को समझने और तृष्णा के परित्याग में सहायक है।

बुद्ध के चार आर्य सत्य इस प्रकार हैं:

1. दुक्ख-जीवन दु:खमय है।

---

[5]योगसूत्र 1.2

[6]योगसूत्र 1.3

[7]योगसूत्र 1.24

©Indira Gandhi National Open University

2. दुक्ख समुदय- दु:ख का कारण तृष्णा है।
3. दुक्ख निरोध- तृष्णा का निरोध संभव है।
4. मार्ग-अष्टांगिक मार्ग द्वारा दु:ख का निरोध किया जा सकता है।

यह मार्ग (सम्यक दृष्टि, संकल्प, वाक्, कर्म, आजीविका, प्रयास, स्मृति, समाधि) योग की अष्टांग प्रणाली से अत्यंत मेल खाता है। यद्यपि बुद्ध आत्मा या पुरुष की स्वीकृति नहीं करते, परंतु उनके ध्यान और साधना के उपाय, चित्त की निर्मलतापर आधारित हैं। गौतमबुद्ध ने दु::ख को अपने चिंतन का केंद्र बनाया। उन्होंने चार आर्य सत्यों के माध्यम से दु:ख की वास्तविकता, उसके कारण, उसकी समाप्ति और समाप्ति के मार्ग (अष्टांगिकमार्ग) की व्याख्या की। बुद्ध के अनुसार दु:ख का मूल कारण अज्ञान (अविद्या) और तृष्णाहै। उन्होंने चेतना और अनुभव की क्षणभंगुरता (अनित्यता), पीड़ा दायकता (दु:ख/दुक्ख) और आत्महीनता (अनात्मता) को स्पष्ट किया है।

समन्वयात्मकदृष्टि

बुद्ध एवं पतञ्जलि द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों के साम्यता के आधार रूप में सांख्यदर्शन की स्थापना निम्न बिन्दुओं के अंतर्गत की जा सकती है-

दु:ख की व्याख्या: एक समान दृष्टिकोण

पतञ्जलि और बुद्ध दोनों ही दु:ख को जीवन की केंद्रीय समस्या मानते हैं। योगदर्शन में अविद्या को मूल क्लेश कहा गया है, जो व्यक्ति को अपनी वास्तविक प्रकृति से विमुख करता है। इसी तरह बुद्ध भी अज्ञान (अविद्या) को दु:ख का मूल कारण मानते हैं।बुद्ध द्वारा प्रतिपादित दुःख और उसके निवारण के मार्ग-चार आर्य सत्य और अष्टांगिक मार्ग-सांख्य के दु:ख की धारणा और उसके समाधान के समान प्रतीत होते हैं। बुद्ध कहते हैं-**"दुःखं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयो**

Volume 4, Issue 2, 2025, p.67-80, ISSN 2583-6331
©Indira Gandhi National Open University

अरियसच्चं, दुक्खनिरोधो अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं"[8]। यह दृष्टिकोण क्लेशों की उसी शृंखला का उल्लेख करता है, जो पतञ्जलि द्वारा वर्णित है- **"अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः"**[9]। पतञ्जलि के अनुसार जब साधक 'विवेकख्याति' (यथार्थ ज्ञान) को प्राप्त करता है, तब वह प्रकृति से विलग होकर पुरुष रूप में स्थित हो जाता है[10]। वहीं बुद्ध कहते हैं कि 'तृष्णा' और 'अविद्या' की समाप्ति से निर्वाण की प्राप्ति होती है। इनदोनोंविश्लेषणोंमेंअज्ञानकीभूमिकामूलहै।

इन क्लेशों को दूर करने के लिए दोनों दार्शनिक परम्पराएँ आंतरिकनिरीक्षण और जागरूकता(स्वरूपवस्था/अज्ञान निवृत्ति) को एकमात्र उपाय मानती है।

जागरूकता और साक्षी भाव

बौद्ध साधना में 'स्मृति' (सति) का अत्यंत महत्त्व है। यह स्मृति ही अंततः 'विपश्यना' या अंतर्दृष्टि को उत्पन्न करती है, जिससे व्यक्ति अनित्यता, दु:ख और अनात्मा की अनुभूति करता है।बौद्ध साधना का केंद्रीय स्तंभ सतिपट्ठान है, जिसमें शरीर, वेदना, चित्त और धम्म की निरंतर स्मृति का अभ्यास किया जाता है। सतिपट्ठानमेंचारस्थापनाएँहोतीहैं:1.कायानुपश्यना (शरीरपरध्यान)2.वेदनानुपश्यना (संवेदनाओंपरध्यान)3.चित्तानुपश्यना (मनपरध्यान) और 4.धम्मानुपश्यना (धर्मपरध्यान)।

यह अभ्यास आत्मनिरीक्षण और मन की वृत्तियों पर विजय पाने का साधन बनता है।

---

[8]मज्झिम निकाय

[9]योगसूत्र 2.3

[10]"तदा द्रष्टु: स्वरूपेऽवस्थानम्।" योगसूत्र 1.3
"तदभावात्संयोगाभावो हानं तद् दृशे: कैवल्यम्।" योगसूत्र 2.25
"सत्त्वपुरुषयो: शुद्धिसाम्ये कैवल्यम्।" योगसूत्र 3.55
"पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसव: कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।" योगसूत्र 4.34

©Indira Gandhi National Open University

यह प्रक्रिया उस धारणा-ध्यान-समाधि के अभ्यास जैसी ही है जिस प्रकार योगसूत्र में वर्णित है- **"त्रयमेकत्र संयमः"**[11]। बौद्ध ध्यान प्रणाली विशेष रूप से विपश्यना और आनापानसति के माध्यम से ही निर्वाण की प्राप्ति संभव होती है। पतञ्जलि की ध्यान प्रणाली समाधि की अवस्था में विवेकख्याति (वस्तुनिष्ठ भेदबुद्धि) को उत्पन्न करती है-जो कैवल्य की ओर ले जाती है-**"तस्य सप्तधा प्रान्तभूमिः प्रज्ञा"**[12]।

ध्यान: आत्मानुशासनऔरमुक्तिकासाधन

बौद्ध और योग परंपराओं में ध्यान का जो व्यापक उपयोग है, वह न मात्र साधना की विधि है, अपितु मोक्ष की दिशा में वैज्ञानिक और साथ ही मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व भी करता है। बौद्ध परिप्रेक्ष्य में, विपश्यना ध्यान के माध्यम से साधक "अनिच्चा", "दुक्ख", और "अनत्ता" के तीन लक्षणों का साक्षात् अनुभव करता है, जो उसे तृष्णा और अविद्या से मुक्त कर निर्वाण की ओर अग्रसर करता है। यह प्रक्रिया **'सतिपट्ठान सुत्त'**में विशेष रूप से उल्लिखित है- **"कायानुपस्सी विहरति, वेदनानुपस्सी विहरति, चित्तानुपस्सी विहरति, धम्मानुपस्सी विहरति"**[13]अर्थात् वह शरीर, वेदना, चित्त और धर्म का निरंतर निरीक्षण करता है।

यह निरंतर जागरूकता वस्तुतः वही प्रक्रिया है जिसे पतञ्जलि ने समाधिपाद और विभूतिपाद में चित्त की वृत्तियों के निरोध और परिणामों के रूप में प्रस्तुत किया है। पतञ्जलि का ध्यान केवल एक मानसिक एकाग्रता नहीं है, अपितु उसे योग के सबसे उच्चतम और रूपांतरणकारी साधन के रूप में स्वीकार किया गया है।

[11]योगसूत्र 3.4

[12]योगसूत्र 2.27

[13]मज्झिम निकाय 10

Volume 4, Issue 2, 2025, p.67-80, ISSN 2583-6331
©Indira Gandhi National Open University

बुद्ध द्वारा प्रतिपादित 'आनापानसति' (श्वास पर ध्यान) और 'विपश्यना' ध्यान की दो मुख्य विधियाँ हैं। ये चित्त को एकाग्र करने और गहन अंतर्दृष्टि प्रदान करने में सहायक हैं। ये ध्यान मन, शरीर, भाव और चेतना को देखने की एक सतत प्रक्रिया है।

पतंजलि की धारणा, ध्यान और समाधि की प्रक्रियाएँ भी यही कार्य करती हैं। विशेषतः समाधि की सात अवस्थाएँ-सवितर्क, निर्वितर्क, सविचार, निर्विचार, सानंद, अस्मिता और असंप्रज्ञात-साधक को आत्मा की साक्षात अनुभूति कराती हैं।

मनकास्थान: दोनोंपरंपराओंमेंकेंद्रबिंदु

धम्मपद में स्पष्ट कहा गया है- **"मनोपुब्बङ्गमा धम्मा, मनोसेट्ठा मनोमया।"**[14]अर्थात् मन ही समस्त धर्मों का अग्रदूत है, मन ही प्रधान है, मन से ही सब बनते हैं। यही तथ्य योगसूत्र में भी परिलक्षित होता है जहाँ चित्त पर नियंत्रण ही मुक्ति का मूल बताया गया है- **"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः"**[15]। योग के अनुसार, चित्त में जब तक विकार(राग, द्वेष, मोह)स्थित हैं, तब तक पुरुष अपने स्वरूप का अनुभव नहीं कर सकता। जैसे-जैसे साधक अभ्यास और वैराग्य के माध्यम से चित्तवृत्तियों का शमन करता है, वैसे-वैसे उसकी अंतःदृष्टि (प्रज्ञा) तीव्र होती जाती है और वह विवेकख्याति की स्थिति को प्राप्त होता है।

..."माताञ्च पुत्तं अयुसा एकपुत्तं अनुरक्खे"-जैसे माता अपने एकलौते पुत्र की रक्षा करती है, वैसे ही साधक को समस्त जीवों के प्रति मैत्री और करुणा का भाव रखना चाहिए। यह दृष्टिकोण न केवल नैतिक अनुशासन को दर्शाता है, बल्कि आत्म-परिवर्तन और बौद्ध ध्यान की भावना को भी दर्शाता है। पतञ्जलि के अष्टाङ्ग योग में भी यमों में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह जैसे नैतिक मूल्य अनिवार्य हैं। विशेषतः अहिंसा को योगदर्शन में सबसे प्रथम स्थान

---

[14]धम्मपद

[15]योगसूत्र 1.2

©Indira Gandhi National Open University

प्राप्त है-**"अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्संनिधौ वैरत्यागः"**[16] । जब साधक अहिंसा में स्थिर हो जाता है तो उसके निकट हिंसा स्वतः शांत हो जाती है। यह स्थिति बौद्ध दर्शनके'अहिंसा' और 'सम्यक आजीव' की शिक्षा के समरूप है।

दोनों परंपराओं में नैतिक जीवन का उद्देश्य केवल सामाजिक व्यवस्था बनाए रखना नहीं है, अपितु यह आत्मिक शुद्धि और ध्यान के लिए आधारभूमि है। बौद्ध पथ में 'शील' को 'समाधि' और 'प्रज्ञा' से पूर्व स्थान दिया गया है, उसी प्रकार योग में यम–नियम ध्यान से पूर्व आते हैं। ये दोनों क्रम इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि मन की स्थिरता और आंतरिक शांति नैतिक जीवन से ही उपजती है। ऐसा नहीं है कि नैतिकता मात्र समाज के लिए है वरन्वह आत्मा के विकास के लिए भी एक आवश्यक सोपान है।

सांख्य, योग और बौद्ध इन तीनों परंपराओं में पुनर्जन्म की अवधारणा भी स्व-स्व विचारानुकल पद्धतियों में प्राप्त होती है। सांख्य में जब तक पुरुष प्रकृति के साथ तादात्म्य रखता है, वह संसार के विविध जन्मों में भ्रमण करता है। बौद्ध परिप्रेक्ष्य में, जब तक तृष्णा (तन्हा) और अविद्या विद्यमान हैं, पुनर्जन्म की श्रृंखला (संसर) चलती रहती है। योगदर्शन में भी जब तक चित्तवृत्तियों का पूर्ण निरोध नहीं होता, तब तक साधक जन्म-मरण के बंधनों से मुक्त नहीं होता। पतञ्जलि के अनुसार-**"क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्टजन्मवेदनीयः"**[17]। अर्थात् कर्माशय(कर्म-संस्कार) क्लेशों से उत्पन्न होता है और वह आने वाले जन्मों में फल देता है।

इन सभी विचारों से यह स्पष्ट होता है कि तीनों दर्शन इस संसार को दुःखमूलक मानते हैं, परंतु यह दुःख अटल नहीं है; इसके उन्मूलन के साधन भी दिए गए हैं। वे न तो भाग्यवादी हैं और न ही दैवी कृपा पर आधारित। बुद्ध ने कहा-**"नत्थि कंमस्स पत्यि"-**कर्म का फल अनिवार्य है; किसी

---

[16]योगसूत्र 2.35

[17]योगसूत्र 2.12

©Indira Gandhi National Open University

देवता की कृपा या श्राप से नहीं बचा जा सकता। योगदर्शन भी इस बात को प्रतिपादित करता है कि साधना के बिना कैवल्य असंभव है। केवल पुरुषार्थ ही मोक्ष का कारण है।

बौद्ध परंपरा में अष्टांगिक मार्ग और योग में अष्टाङ्ग योग दोनों ही आठ अङ्गों के माध्यम से एक पूर्ण साधना प्रक्रिया का निर्माण करते हैं। बौद्ध अष्टांगिक मार्ग में सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यकवाक्, सम्यक कर्म, सम्यक आजीव, सम्यकव्यायाम (प्रयास), सम्यक स्मृति और सम्यक समाधि आते हैं। योग के अष्टाङ्ग में यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि आते हैं। दोनों की समान संरचना यह दर्शाती है कि साधना केवल ध्यान तक सीमित नहीं, बल्कि एक समग्र जीवन दृष्टि का अङ्ग है। साधक का आचरण, उसकी वाणी, उसकी आजीविका, उसकी स्मृति और ध्यान-ये सब मिलकर ही उसे मुक्ति की ओर ले जाते हैं।

एक और महत्त्वपूर्ण बिंदु है-'अनात्म' और 'पुरुष' की अवधारणाओं का अंतर। बौद्ध परंपरा आत्मा के स्थायी अस्तित्व को नकारती है-**"सबे धम्मा अनत्ता"**-सब कुछ अनात्मा है। वहीं योगदर्शन और सांख्य पुरुष को शुद्ध, चेतन, साक्षी और अपरिवर्तनशील तत्त्व मानते हैं। यह भेद दर्शाता है कि जहाँ बौद्ध ध्यान द्वारा 'मैं' की अवधारणा को तोड़ना चाहता है, वहीं योग इस 'मैं' को शुद्ध रूप में पहचानने का प्रयत्न करता है। परंतु व्यावहारिक धरातल पर, दोनों ही मार्ग अहंकार, वासना और अज्ञान के विनाश की प्रक्रिया को अपनाते हैं।

मुक्ति: कैवल्यऔरनिर्वाण

वास्तव में, बुद्ध और पतञ्जलि के योगसूत्र दोनों ही आत्मा को केवल शाब्दिक रूप में नहीं, अनुभव के रूप में प्राप्त करने का मार्ग प्रदान करते हैं। बुद्ध कहते हैं-**"यो धम्मं पस्सति, सो मां पस्सति"**-जो धर्म को देखता है, वह मुझे देखता है। पतञ्जलि कहते हैं-**"तदा द्रष्टुः**

Volume 4, Issue 2, 2025, p.67-80, ISSN 2583-6331
©Indira Gandhi National Open University

स्वरूपेऽवस्थानम्"[18]-जब चित्त शांत हो जाता है, तब साधक अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है। दोनों ही अभिव्यक्तियाँ यह दर्शाती हैं कि आत्मा या निर्वाण केवल एक सिद्धांत नहीं, वरन् प्रत्यक्ष अनुभव की वस्तु है।

समानताएँऔरभिन्नताएँ: एकसमन्वितदृष्टि

समानताएँ:

दु:ख की केंद्रीय समस्या के रूप में पहचान।
अज्ञान को दु:ख का मूल कारण मानना।
ध्यान और मन की शुद्धि पर बल।
नैतिक जीवन और अनुशासन की भूमिका।
मुक्ति को व्यक्तिगत प्रयास और अंतर्दृष्टि का परिणाम मानना।

भिन्नताएँ:

दर्शन की प्रवृत्ति: योग एक 'आस्तिक' दर्शन, बौद्ध 'नास्तिक'।

आत्मा की मान्यता: योग में आत्मा स्वीकार्य, बौद्ध में अनात्मवाद।

साधना का सामाजिक दृष्टिकोण: बुद्ध का पथ अधिक लोकसुलभ व समतावादी, योग का त्रिस्तरीय पथ तपस्वी व वैराग्यशीलों(उच्चतम अधिकारी) के लिए प्राथमिकता।

साधना की प्रवृत्ति: बुद्ध की शिक्षा में करुणा, मैत्री जैसे प्रावृत्तिक गुणों पर अत्यधिक बल; पतञ्जलि का योग अधिक नैवृत्तिकऔर आत्म-केंद्रित है।
मुक्ति की परिभाषा: कैवल्य बनाम निर्वाण।

बिंदु	बौद्धयोग	पातंजलयोग
दु:खकाकारण	अज्ञानऔरतृष्णा	क्लेश (अविद्याआदि)
मुक्तिकामार्ग	अष्टांगिकमार्ग	अष्टाङ्गयोग

[18]योगसूत्र 1.3

©Indira Gandhi National Open University

आत्माकीमान्यता	अनात्मवाद	आत्मा/पुरुषस्वीकार्य
ध्यानकीविधियाँ	विपश्यना, सतिपट्ठान	धारणा, ध्यान, समाधि
अंतिमलक्ष्य	निर्वाण	कैवल्य

यद्यपि दोनों दर्शनों मेंआत्मा की धारणा भिन्न है, परंतु उनके अभ्यासात्मक पहलू-जैसे ध्यान, अनुशासन,जागरूकता और आत्मनिरीक्षण-अत्यधिक समान हैं।

निष्कर्ष

सांख्य दर्शन ने इन दोनों परंपराओं को जो मौलिक आधार प्रदान किया है, वह उनके कारण-कार्य संबंधों, मनोवैज्ञानिक विश्लेषणों और मुक्ति के यथार्थ दृष्टिकोण में स्पष्ट होता है। सांख्यकारिका में ईश्वर के अभाव में भी ज्ञान के द्वारा मुक्ति को संभव बताया गया है[19]। यही दर्शन पतञ्जलि ने व्यावहारिक रूप में अपनाया और बुद्ध ने उसे मानसिक अनुशासन के रूप में आत्मसात् किया।

अंततः यह कहा जा सकता है कि सांख्य, योग और बौद्ध तीनों ही परंपराएँ एक साझा आध्यात्मिक आधार पर स्थित हैं-जहाँ अनुभव, निरीक्षण, अनुशासन, ध्यान और मुक्ति के लिए व्यक्तिगत प्रयास को प्राथमिकता दी गई है। इनका अंतिम लक्ष्य अलग-अलग प्रतीत होते हुए भीकैवल्य, निर्वाण या आत्मसाक्षात्कार वास्तव में एक ही है- दुःख का अंत और चित्त की पूर्ण

[19] “तेन निवृत्तप्रसवामर्थवशात् सप्तरूपविनिवृत्ताम्। प्रकृतिं पश्यति पुरुषः प्रेक्षकवदवस्थितः सुस्थः।“ सांख्यकारिका65

©Indira Gandhi National Open University

स्वतंत्रता। यह स्वतंत्रता ही वास्तविक मानव धर्म है, जो न केवल भारत की दार्शनिक परंपराओं की आत्मा है, बल्कि आज के युग में भी अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी है।

यदि हम इन शिक्षाओं को जीवन में उतारें, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि यह केवल प्राचीन दर्शनों का बौद्धिक अभ्यास नहीं, बल्कि आज भी आत्म-परिवर्तन और समाज-सुधार का एक सशक्त साधन है। सांख्य की विश्लेषणात्मक शक्ति, योग की व्यावहारिक विधियाँऔर बुद्ध की करुणाप्रेरित दृष्टि,इन तीनों का समन्वय न केवल मुक्ति के लिए अपितु एक समरस, संतुलित और जागरूक जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. सांख्यकारिका. राकेश शास्त्री,1998।
2. पतंजलियोगसूत्र. अनुवाद: एडविनएफ. ब्रायंट, 2009।
3. धम्मपद. अनुवाद: एकनाथईश्वरन, 2007।
4. सतिपट्ठानसुत्त. अनुवाद: भिक्षुबोधि, 2012।
5. फ्यूरस्टीन, जॉर्ज. दयोगाट्रेडिशन. होहमप्रेस, 2001।
6. गेथिन, रूपर्ट. दफाउंडेशन्सऑफबुद्धिज्म. ऑक्सफोर्डयूनिवर्सिटीप्रेस, 1998।
7. एलीएड, मिर्सिया. योगा: इम्मॉर्टैलिटीएंडफ्रीडम. प्रिंसटनयूनिवर्सिटीप्रेस, 1970।

©Indira Gandhi National Open University